॥ श्री महावीराय नमः ॥

कर्म स्तोक मंजूषा

रसबंध स्वामित्व

: प्रकाशक :

साधुमार्गी पब्लिकेशन

अन्तर्गत : श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

रसबंध स्वामित्व

(उत्तर कर्म प्रकृतियों में रसबंध स्वामित्व प्ररूपणा)

मुख्य आधारः-

प्रस्तुत विषय को सरलता से समझने के लिए तीन द्वारों के माध्यम से इसका वर्णन किया जा रहा हैः-

I. उत्कृष्ट रसबंध स्वामी

II. जघन्य रसबंध स्वामी

III. सादि-अनादि प्ररूपणा

ज्ञातव्य बिन्दुः-

1. सभी प्रकृतियों के उत्कृष्ट व जघन्य रसबंध के स्वामी सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त ही होते हैं।

2. आयु को छोड़कर शेष (120-4) 116 प्रकृतियों के स्थितिबंध के साथ रसबंध के नियम-

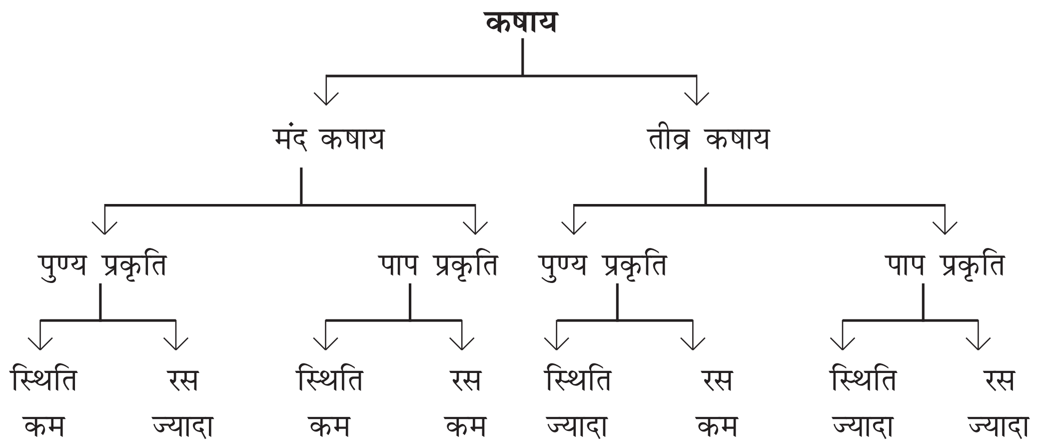

पुण्य-पाप प्रकृतियों के स्थितिबंध के साथ-साथ रसबंध का यह सामान्य नियम है। विशेष रूप से विचार करने पर स्थितिबंध में सिर्फ कषायोदय निमित्त है, परन्तु रसबंध में कषायोदय के साथ-साथ लेश्याजन्य शुभाशुभ परिणाम भी निमित्त है। अतः पुण्य प्रकृतियों के उत्कृष्ट रसबंध के लिए एवं पाप प्रकृतियों के जघन्य रसबंध के लिए मंद कषायोदय के साथ लेश्याजन्य विशुद्ध परिणामों का होना अनिवार्य है, यदि कषायोदय मंद है परन्तु लेश्याजन्य परिणाम विशुद्ध नहीं है तो वह जीव पुण्य प्रकृतियों के उत्कृष्ट रसबंध का स्वामी नहीं हो सकता है।

कषाय मंदता के कारण एकेन्द्रिय जीव 85 प्रकृतियों के जघन्य स्थितिबंध के स्वामी हैं परन्तु लेश्याजन्य परिणामों की विशुद्धि अधिक नहीं होने के कारण वे एक भी पुण्य प्रकृति के उत्कृष्ट रसबंध के एवं एक भी पाप प्रकृति के जघन्य रसबंध के स्वामी नहीं होते हैं। लेश्याजन्य परिणामों की विशुद्धि सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवों में सबसे अधिक संभव है, अतः सभी पुण्य प्रकृतियों के उत्कृष्ट रसबंध एवं पाप प्रकृतियों के जघन्य रसबंध के स्वामी सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव ही होते हैं। पुण्य प्रकृतियों का जघन्य रस एवं पाप प्रकृतियों का उत्कृष्ट रसबंध तीव्र कषायोदय में सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव करते हैं।

उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी का वर्णन

शुभ प्रकृतियों के लिए:-

विशुद्ध परिणामों में जघन्य स्थितिबंध के समय उत्कृष्ट रसबंध होता है। जघन्य स्थितिबंध के प्रकरण में 5 प्रकार के जीव जघन्य स्थितिबंध के स्वामी बताए गए हैं उनमें से एकेन्द्रिय व असन्नी तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में विशुद्ध परिणाम संभव नहीं है अतः सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवों की अपेक्षा पुण्य प्रकृतियों का जघन्य स्थितिबंध जिन जीवों के होता है वे ही जीव उन-उन प्रकृतियों के उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी हैं।

अशुभ प्रकृतियों के लिए:-

जो जीव उत्कृष्ट स्थितिबंध के स्वामी हैं वे ही जीव उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी हैं।

यथा-

प्रकृतियाँ	संख्या	स्वामी
1. ज्ञानावरणीय-5, दर्शनावरणीय-9, असाता-वेदनीय, मिथ्यात्व मोहनीय, 16 कषाय, नपुंसक वेद, अरति-शोक, भय, जुगुप्सा, हुण्डक संस्थान, अशुभ वर्णादि-4, अस्थिर पंचक, उपघात, नीचगोत्र, अंतराय-5	54	अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त चारों गति के जीव।
2. अशुभ विहायोगति, दु:स्वर नामकर्म	2	अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव। नवरं-भवनपति से दूसरे देवलोक को छोड़कर।
3. एकेन्द्रिय, स्थावर	2	अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि भवनपति से दूसरे देवलोक के देव।
4. नरक द्विक	2	अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च।
5. तिर्यञ्च द्विक, सेवार्तक संहनन	3	अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि नैरयिक व देव। नवरं- सेवार्तक संहनन का उत्कृष्ट रसबंध तीसरे से आठवें देवलोक के देवों के समझना।
6. हास्य-रति, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, मध्यम 4 संहनन, मध्यम 4 संस्थान	12	तत् प्रायोग्य संकलिष्ट परिणामी चारों गति के मिथ्यादृष्टि सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव।
7. जाति त्रिक, सूक्ष्म त्रिक	6	तत् प्रायोग्य संकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च।

सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवों की अपेक्षा पुण्य प्रकृतियों के जघन्य स्थितिबंध व उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी 5 प्रकार के जीव होते हैं:- यथा*-

I. 10वें गुणस्थानवर्ती क्षपक जीव,

II. 8/6 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव,

III. अतिविशुद्ध परिणामी सम्यक्दृष्टि देव,

IV. अनिवृत्तिकरण के अंतिम समयवर्ती 7वीं पृथ्वी का नैरयिक,

V. तत् प्रायोग्य विशुद्ध परिणामी भवनपति से दूसरे देवलोक के देव।

प्रकृतियाँ	संख्या	स्वामी
1. यश:कीर्ति, सातावेदनीय, उच्चगोत्र	3	दसवें गुणस्थानवर्ती क्षपक जीव।
2. देव द्विक, पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रिय द्विक, आहारक द्विक, तैजस, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, शुभवर्णादि-4, शुभ विहायोगति, त्रसनवक, पराघात, जिननाम, उच्छ्वास, अगुरुलघु, निर्माण।	29	8/6 गुणस्थान के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव।
3. मनुष्य द्विक, औदारिक द्विक, वज्रऋषभनाराच संहनन	5	अतिविशुद्ध परिणामी सम्यक्दृष्टि देव। सम्यक्दृष्टि अवस्था में नैरयिक व देव ही इन 5 प्रकृतियों का बंध करते हैं तथा स्वभाव से नैरयिकों से देवों में विशुद्धि अधिक होने से देवों को ही उत्कृष्ट रसबंध का स्वामी माना गया है।

* उपरोक्त 5 प्रकार के जीव विशुद्धि के क्रम से स्थापित किए गए हैं।

प्रकृतियाँ	संख्या	स्वामी
4. उद्योत	1	अनिवृत्तिकरण के अंतिम समयवर्ती 7वीं पृथ्वी का नैरयिक उद्योत का उत्कृष्ट रसबंध का स्वामी है। उद्योत तिर्यञ्च प्रायोग्य प्रकृति है प्रथम दो गुणस्थान में ही उद्योत का बंध होता है। इन दोनों गुणस्थानों में सबसे अधिक विशुद्धि सम्यक्त्व प्राप्ति की प्रक्रिया में अनिवृत्तिकरण के अंतिम समय में होती है। भव स्वभाव से 7वीं पृथ्वी के नैरयिक मिथ्यात्व अवस्था में तिर्यञ्च प्रायोग्य प्रकृतियों को ही बांधते हैं उसके अतिरिक्त शेष सभी जीव सम्यक्त्व प्राप्ति की प्रक्रिया में परावर्तमान शुभ प्रकृतियों को ही बांधते हैं। अतः 7वीं पृथ्वी के नैरयिक को उद्योत नामकर्म का उत्कृष्ट रसबंध का स्वामी माना गया है।
5. आतप	1	तत् प्रायोग्य विशुद्ध परिणामी भवनपति से दूसरे देवलोक के देव आतप के उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी हैं। एकेन्द्रिय प्रायोग्य प्रकृतियों का बंध करते हुए सर्वाधिक विशुद्ध परिणाम भवनपति से दूसरे देवलोक के देवों के ही होते हैं। मनुष्य व तिर्यञ्च इतने विशुद्ध परिणाम होने पर एकेन्द्रिय प्रायोग्य प्रकृतियों का बंध नहीं करते हैं। अतः भवनपति से दूसरे देवलोक के देवों को ही आतप का उत्कृष्ट रसबंध का स्वामी माना गया है।

4 आयु के उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी

प्रकृतियाँ	संख्या	स्वामी
1. नरकायु	1	तत् प्रायोग्य संकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च।
2. तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु	2	तत् प्रायोग्य विशुद्ध परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च। स्पष्टीकरण– जो जीव इन प्रकृतियों के उत्कृष्ट स्थितिबंध के स्वामी हैं वे ही जीव इन प्रकृतियों के उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी हैं। नवरं– उत्कृष्ट स्थितिबंध आयुबंध के प्रथम समय में ही होता है, परन्तु उत्कृष्ट रसबंध आयुबंध के अंतर्मुहूर्त्त काल में कभी भी हो सकता है।
3. देवायु	1	अप्रमत्तयति। स्पष्टीकरण– देवायु के उत्कृष्ट स्थितिबंध के स्वामी अप्रमत्ताभिमुख प्रमत्तयति है, परन्तु उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी अप्रमत्तयति है, क्योंकि छठें गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में विशुद्धि अधिक होने से रसबंध अधिक होता है।

जघन्य रसबंध स्वामित्व प्ररूपणा

ज्ञातव्य बिन्दुः-

(I) स्थितिबंध में कषाय निमित्त है, लेकिन रसबंध में कषाय के साथ-साथ लेश्याजन्य शुभाशुभ परिणाम भी निमित्त है।

स्थितिबंध —निमित्त→ कषाय

रसबंध —निमित्त→ कषाय+लेश्याजन्य परिणाम

(II) जघन्य रसबंध के लिए सामान्य नियमः-

पुण्य प्रकृति रस कमः- कषाय ज्यादा+अशुभ लेश्याजन्य परिणाम = स्थिति ज्यादा

पाप प्रकृति रस कमः- कषाय कम+विशुद्ध लेश्याजन्य परिणाम = स्थिति कम

(III) प्रत्येक स्थितिस्थान के असंख्यात लोकाकाश प्रदेश (ALP) प्रमाण कषायोदय स्थान होते हैं अर्थात् नाना (अनेक) जीवों के समान स्थितिबंध में भी कषायस्थान भिन्न-भिन्न हो सकता है।

1 स्थितिस्थान = असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण कषायस्थान

स्पष्टीकरणः-

स्थितिस्थान- 1 समय में जितनी स्थिति का बंध होता है उसे स्थितिस्थान कहते हैं।

यदि कोई 70 कोटा-कोटि सागरोपम की स्थिति बांधे तो वह 1 स्थितिस्थान

यदि कोई 70 कोटा-कोटि सागरोपम-1 समय की स्थिति बांधे तो वह दूसरा स्थितिस्थान

यदि कोई 70 कोटा-कोटि सागरोपम-2 समय की स्थिति बांधे तो वह तीसरा स्थितिस्थान

उपरोक्त बिन्दु अनुसार कोई जीव यदि 70 कोटा-कोटि सागरोपम की स्थिति बांधे तो उसमें भी कषायोदय भिन्न-भिन्न प्रकार का हो सकता है।

(IV) 1 कषायोदय स्थान में असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण लेश्याजन्य परिणाम अर्थात् असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण अनुभाग बंध के निमित्तभूत स्थान हो सकते हैं।

1 कषाय स्थान = असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण लेश्याजन्य परिणाम

सारांशः-

(I) प्रत्येक स्थितिस्थान में उसके कारणभूत असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण कषायोदय स्थान होते हैं।

(II) एक-एक कषायोदय स्थान में असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण लेश्याजन्य परिणाम अर्थात् अनुभाग बंध के निमित्तभूत अध्यवसाय स्थान।

1 स्थितिस्थान

- 1 कषाय स्थान
- 2 कषाय स्थान
- 3 कषाय स्थान
- 4 कषाय स्थान
- ..... यावत्
- असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण कषाय स्थान तक

1 कषाय स्थान ↓

- 1 लेश्या परिणाम
- 2 लेश्या परिणाम
- 3 लेश्या परिणाम
- 4 लेश्या परिणाम
- ..... यावत्
- असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण लेश्या परिणाम तक

(III) लेश्याजन्य परिणामों की विशुद्धि व मलीनता सबसे अधिक सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त में संभव है, अतः सभी प्रकृतियों का जघन्य व उत्कृष्ट रसबंध के स्वामी सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव ही होते हैं।

(IV) 120 प्रकृतियों के रसबंध के लिए सामान्य नियमः-

116 प्रकृति	**पुण्य प्रकृति**		**पाप प्रकृति**	
	स्थितिबंध	रसबंध	स्थितिबंध	रसबंध
कषाय ↑	↑	↓	↑	↑
कषाय ↓	↓	↑	↓	↓

4 आयु	**पुण्य प्रकृति**		**पाप प्रकृति**	
	स्थितिबंध	रसबंध	स्थितिबंध	रसबंध
कषाय ↑	↓	↓	↑	↑
कषाय ↓	↑	↑	↓	↓

जघन्य रसबंध स्वामित्व की प्ररूपणा 3 प्रकार से की जा रही है-

- बंधयोग्य शेष 116 प्रकृतियाँ
  - परावर्तमान मध्यम परिणाम की अपेक्षा
  - परावर्तमान मध्यम परिणाम के अतिरिक्त शेष परिणाम की अपेक्षा
- 4 आयु

(I) परावर्तमान मध्यम परिणाम- एक समीक्षा

परावर्तमान मध्यम परिणामः- परावर्तमान = परिवर्तन, Change.

अंतर्मुहूर्त्त काल में परावर्तमान रूप से प्रकृतियों को बांधना परावर्तमान मध्यम परिणाम कहलाता है।

उदाहरणः- किसी जीव ने प्रथम अंतर्मुहूर्त्त काल में सातावेदनीय का बंध, द्वितीय अंतर्मुहूर्त्त में असातावेदनीय का बंध, तृतीय अंतर्मुहूर्त्त में पुनः सातावेदनीय का बंध। इस प्रकार अंतर्मुहूर्त्त-अंतर्मुहूर्त्त काल में परावर्तमान रूप से प्रकृतियों को बांधना परावर्तमान मध्यम परिणाम है।

प्रथम अंतर्मुहूर्त्त → द्वितीय अंतर्मुहूर्त्त → तृतीय अंतर्मुहूर्त्त

साता (बंध) → असाता (बंध) → साता (बंध) = परावर्तन मध्यम परिणाम

परावर्तन मध्यम परिणाम में बंधने के नियमः-

पुण्य प्रकृतिः- सामान्य रूप से पुण्य प्रकृतियों के उत्कृष्ट स्थितिबंध के समय सबसे जघन्य रस होता है, लेकिन जिन पुण्य प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थितिबंध परावर्तमान मध्यम परिणामों में होता है उनके लिए ऐसा नियम नहीं है।

वहाँ नियमः- उत्कृष्ट स्थितिबंध से लेकर आगे जिस स्थितिबंध स्थान तक परावर्तमान मध्यम परिणाम रहते हैं उस स्थितिबंध स्थान तक जघन्य रसबंध होता है।

पाप प्रकृतिः- सामान्य रूप से पाप प्रकृतियों के जघन्य स्थितिबंध के समय जघन्य रसबंध होता है, लेकिन जिन पाप प्रकृतियों का जघन्य स्थितिबंध परावर्तमान मध्यम परिणामों में होता है, उनके लिए ऐसा नियम नहीं है।

वहाँ नियमः- जघन्य स्थितिबंध स्थान से लेकर जिस स्थितिबंध स्थान तक परावर्तमान मध्यम परिणाम रहते हैं, उस स्थितिबंध स्थान तक जघन्य रसबंध होता है।

परावर्तमान मध्यम परिणाम में जघन्य रसबंध का नियम

परावर्तमान मध्यम परिणाम में

पुण्य प्रकृति	**पाप प्रकृति**
उत्कृष्ट स्थितिबंध स्थान से लेकर जिस स्थितिबंध स्थान तक वह प्रकृति परावर्तमान मध्यम परिणामों में बंधती है, वहाँ तक जघन्य रसबंध होता है।	जघन्य स्थितिबंध स्थान से लेकर जिस स्थितिबंध स्थान तक वह प्रकृति परावर्तमान मध्यम परिणामों में बंधती है, वहाँ तक जघन्य रसबंध होता है।

इन दोनों नियमों को उदाहरण के द्वारा समझते हैं:-

वेदनीय कर्म	**जघन्य स्थिति**	**उत्कृष्ट स्थिति**
सातावेदनीय	12 अंतर्मुहूर्त्त	15 कोटा-कोटि सागरोपम
असातावेदनीय	अंत कोटा-कोटि सागरोपम*	30 कोटा-कोटि सागरोपम

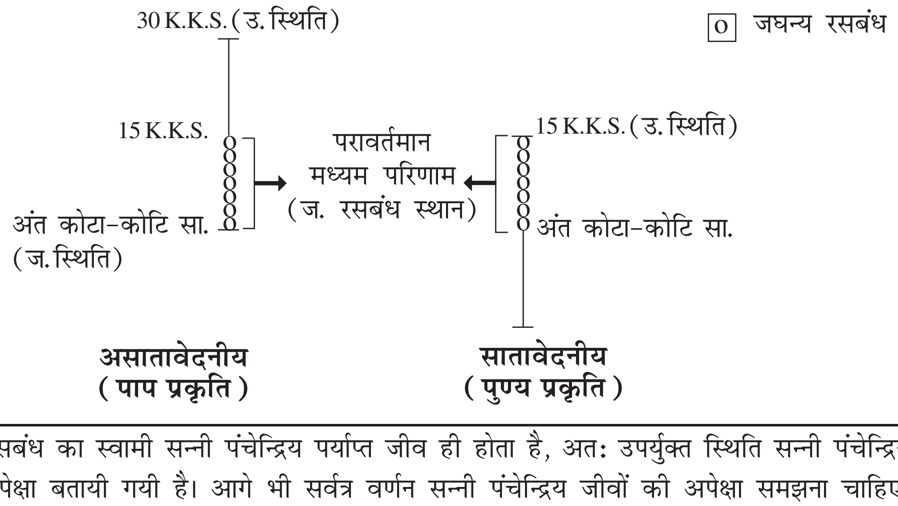

* जघन्य रसबंध का स्वामी सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव ही होता है, अतः उपर्युक्त स्थिति सन्नी पंचेन्द्रिय जीवों की अपेक्षा बतायी गयी है। आगे भी सर्वत्र वर्णन सन्नी पंचेन्द्रिय जीवों की अपेक्षा समझना चाहिए।

(I) परावर्तमान मध्यम परिणामों में बंधने वाली प्रकृतियों के जघन्य रसबंध के स्वामी

प्रकृतियाँ	संख्या	स्वामी
1. वेदनीय-2, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, यश:कीर्ति-अयश:कीर्ति	8	चारों गति के परावर्तमान मध्यम परिणामी जीव इन आठ प्रकृतियों का जघन्य रसबंध करते हैं।
2. मनुष्य-2, विहायोगति-2, संहनन-6, संस्थान-6, सुभग-3, दुर्भग-3, उच्चगोत्र	23	परावर्तमान मध्यम परिणामी चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव। नैरयिक और देव ही सम्यक्त्व अवस्था में मनुष्य-2 का बंध करते हैं अन्य गति के जीव नहीं। अत: मनुष्य-2 का बंध करते हुए सम्यक्त्व अवस्था में परावर्तमान मध्यम परिणाम संभव नहीं है, इसी प्रकार शेष प्रकृतियों में सम्यक्त्व अवस्था में परावर्तमान शुभ प्रकृतियों का ही बंध होता है, जिससे उस समय परावर्तमान मध्यम परिणाम संभव न होने से इन 23 प्रकृतियों के स्वामी परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव हैं।
3. नरक-2, देव-2, सूक्ष्म-3, विकलेन्द्रिय-3	10	परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च। (नैरयिक व देव इन प्रकृतियों का बंध नहीं करते हैं।)
4. एकेन्द्रिय, स्थावर	2	परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यञ्च व भवनपति से दूसरे देवलोक तक के देव। (नैरयिक जीव इन प्रकृतियों का बंध नहीं करते हैं।)

(II) परावर्तमान मध्यम परिणाम के अतिरिक्त परिणाम- एक समीक्षा

116 प्रकृतियों में से जिन प्रकृतियों का जघन्य रसबंध परावर्तमान मध्यम परिणामों में नहीं होता है उनका वर्गीकरण पुण्य व पाप प्रकृति से किया जा रहा है।

पुण्य प्रकृति के लिए नियमः- पुण्य प्रकृति के उत्कृष्ट स्थितिबंध के समय जघन्य रस का बंध होता है।

| पुण्य प्रकृति रसबंध ↓ | = | कषाय ↑ | स्थिति ↑ |

उदाहरणः- जैसे तैजस शरीर की उत्कृष्ट स्थिति 20 कोटा-कोटि सागरोपम की है अतः उसका जघन्य रसबंध भी उस स्थितिबंध के समय होगा।

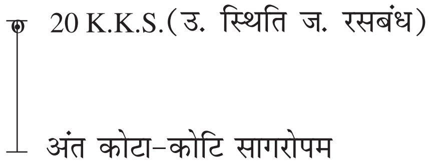

तैजस शरीर (पुण्य प्रकृति)

प्रकृतियाँ	संख्या	स्वामी
1. तैजस-कार्मण शरीर, पराघात, उच्छ्वास, निर्माण, अगुरुलघु, शुभ वर्णादि-4, बादर-3	13	अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव
2. त्रस, पंचेन्द्रिय	2	अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव नवरं- भवनपति से दूसरे देवलोक तक के देव छोड़कर
3. औदारिक शरीर, उद्योत	2	अतिसंकलिष्ट परिणामी नैरयिक व देव
4. औदारिक अंगोपांग	1	अतिसंकलिष्ट परिणामी नैरयिक व तीसरे से आठवें देवलोक तक के देव
5. वैक्रिय-2	2	अतिसंकलिष्ट परिणामी सन्नी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च
6. आतप	1	अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि भवनपति से दूसरे देवलोक तक के देव
7. आहारक-2	2	अनंतर समय में छठें गुणस्थान को प्राप्त करने वाला सातवें गुणस्थानवर्ती संयत
8. जिननाम	1	बद्ध नरकायु क्षयोपशम सम्यक्त्वी अविरत सम्यक्दृष्टि जीव अनंतर समय में मिथ्यात्व को प्राप्त करने वाला

पाप प्रकृतिः- पाप प्रकृति का जघन्य रसबंध विशुद्ध परिणामों में उन प्रकृतियों के बंध विच्छेद के समय होता है।

पाप प्रकृति रसबंध ↓ = कषाय ↓ स्थिति ↓

उदाहरणः- जैसे संज्वलन क्रोध का बंध विच्छेद 9/2 गुणस्थान के अंत में होता है, अतः उसका जघन्य रसबंध भी उसी समय होगा।

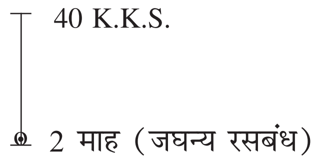

संज्वलन क्रोध (पाप प्रकृति)

विशेषः- ऐसे तो अनंतानुबंधी का बंध विच्छेद दूसरे गुणस्थान के अंत में होता है तो उपरोक्त नियमानुसार जघन्य रसबंध भी दूसरे गुणस्थान में ही होना चाहिए, लेकिन ऐसा नहीं है। दूसरे गुणस्थान की अपेक्षा पहले गुणस्थान में विशुद्धि अधिक होती है, अतः रसबंध भी अल्प होता है।

इसी प्रकार दूसरे गुणस्थान के अंत में विच्छेद होने वाली प्रकृतियों के विषय में समझना चाहिए-

प्रकृतियाँ	**संख्या**	**स्वामी**
1. ज्ञानावरणीय-5, दर्शनावरणीय-4, अंतराय-5	14	दसवें गुणस्थान के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव।
2. संज्वलन लोभ, संज्वलन माया, संज्वलन मान, संज्वलन क्रोध पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, वर्णादि-4, उपघात, निद्रा-2	16	9/5 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव 9/4 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव 9/3 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव 9/2 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव 9/1 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव 8/7 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव 8/6 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव 8/1 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव
3. अरति, शोक	2	प्रमत्त संयत
4. प्रत्याख्यानावरण-4	4	अनंतर समय में संयत पद को प्राप्त करने वाले पाँचवें गुणस्थानवर्ती जीव
5. अप्रत्याख्यान-4	4	अनंतर समय में संयत पद को प्राप्त करने वाले चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव
6. मिथ्यात्व, अनंतानुबंधी-4, स्त्यानगृद्धि-3	8	अनंतर समय में उपशम सम्यक्त्व व संयत पद को युगपत प्राप्त करने वाले अनिवृत्तिकरण के अंतिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव
7. तिर्यञ्च-2, नीचगोत्र		अनंतर समय में उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करने वाले अनिवृत्तिकरण के अंतिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि सातवीं पृथ्वी का नैरयिक
8. स्त्रीवेद, नपुंसक वेद	2	तत् प्रायोग्य विशुद्ध परिणामी चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव

(III) चार आयु में जघन्य रसंबध के स्वामी:-

नियम:- जो जीव इन प्रकृतियों के जघन्य स्थितिबंध के स्वामी हैं वे ही जीव इन प्रकृतियों के जघन्य रसबंध के स्वामी हैं।

जघन्य स्थितिबंध स्वामी = जघन्य रसबंध स्वामी

प्रकृतियाँ	संख्या	स्वामी
1. नरकायु	1	तत् प्रायोग्य विशुद्ध परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च
2. तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु	2	तत् प्रायोग्य संकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च
3. देवायु	1	तत् प्रायोग्य संकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च

जघन्य रसबंध

प्रकृतियाँ	
1. **ज्ञानावरणीय**-5, **दर्शनावरणीय**-4, **अंतराय**-5 (दसवें गुणस्थान के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव)	उ. स्थिति 30 K.K.S. ⊙ ज. रसबंध ज. स्थिति अतंमुहूर्त्त ⊙ (दसवें गुणस्थान के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव) **ज्ञानावरणीय-5, दर्शनावरणीय-4, अंतराय-5**
2. **निद्रा**-5 **स्त्यानगृद्धि**-3- (अनंतर समय में उपशम सम्यक्त्व व संयत पद को युगपत प्राप्त करने वाले अनिवृत्तिकरण के अंतिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव) **निद्रा**-2 (8/1 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव)	30 K.K.S. A. K.K.S. (1th गुण.) ⊙ **स्त्यानगृद्धि-3** 30 K.K.S. (उ. स्थिति) ⊙ A. K.K.S.● (8/1 गुण.▼) **निद्रा-2**

▼ गुण. - गुणस्थान

● A. K.K.S. - अंत कोटा-कोटि सागरोपम

3. **वेदनीय कर्म**–

सातावेदनीय व असातावेदनीय

(परावर्तमान मध्यम परिणामी पहले से छठे गुणस्थानवर्ती चारों गति के जीव)

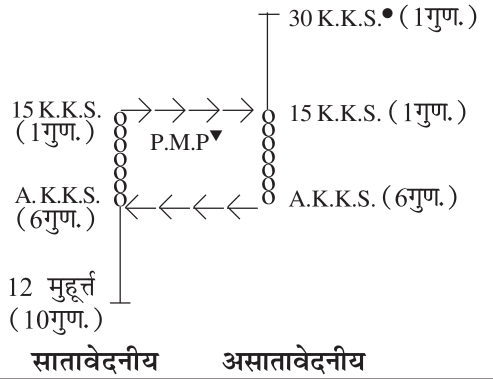

4. **मोहनीय कर्म**–

मिथ्यात्व, अनंतानुबंधी–4

(अनंतर समय में उपशम सम्यक्त्व व संयत पद को युगपत प्राप्त करने वाले अनिवृत्तिकरण के अंतिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव)

अप्रत्याख्यान–4

(अनंतर समय में संयत पद को प्राप्त करने वाले चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव)

प्रत्याख्यानावरण–4

(अनंतर समय में संयत को प्राप्त करने वाले पाँचवें गुणस्थानवर्ती जीव)

संज्वलन–4

क्रोध/मान/माया/लोभ

(9/2, 9/3, 9/4, 9/5 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव)

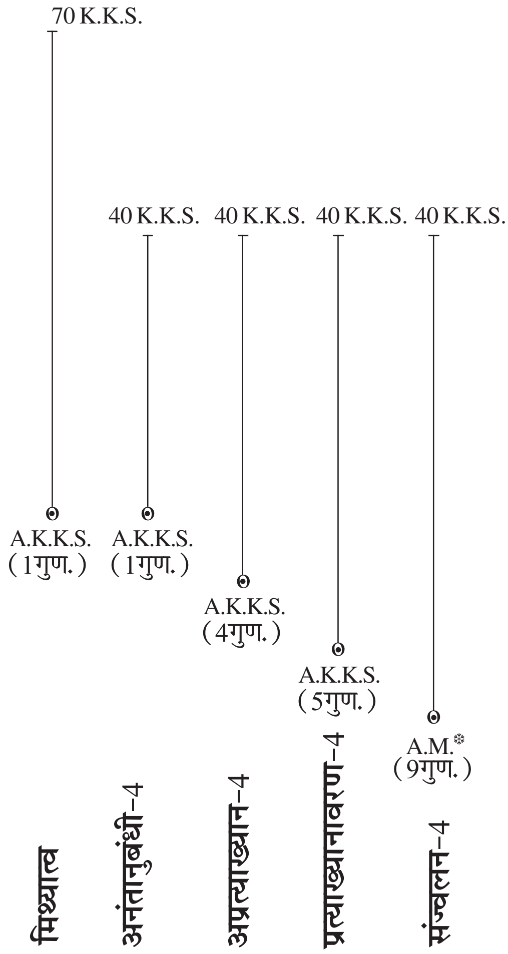

● K.K.S. – कोटा–कोटि सागरोपम

▼ P.M.P. – परावर्तमान मध्यम परिणाम

❄ A.M. – अंतर्मुहूर्त्त

वेद-
पुरुषवेद
(9/1 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव)
स्त्रीवेद, नपुंसकवेद,
(तत् प्रायोग्य विशुद्ध परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव)

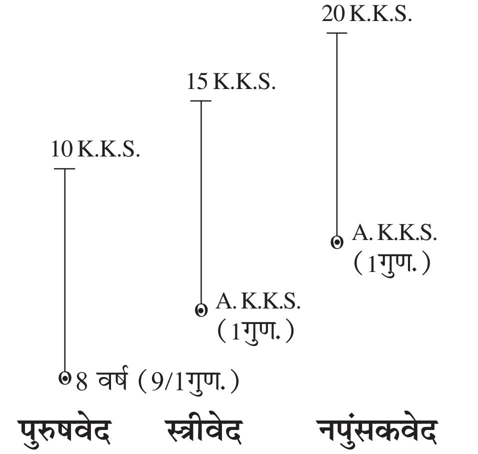

हास्य-6
हास्य-रति, भय, जुगुप्सा
(8/7 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव)
अरति-शोक
(प्रमत्त-संयत)

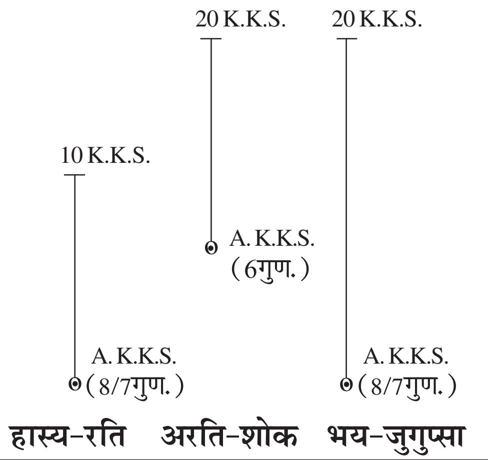

5. **गोत्र कर्म**
उच्चगोत्र
(परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव)
नीचगोत्र
(अनंतर समय में उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करने वाला अनिवृत्तिकरण के अंतिम समयवर्ती सातवीं पृथ्वी का मिथ्यादृष्टि नैरयिक)

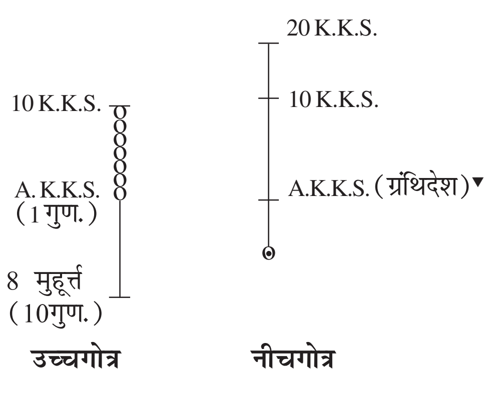

▼ ग्रंथिदेश-यथाप्रवृत्तिकरण का अंतिम समय

6. **नामकर्म**

गति, आनुपूर्वी

नरक-2, **देव**-2

(परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च)

तिर्यञ्च-2

(अनंतर समय में उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करने वाले अनिवृत्तिकरण के अंतिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि सातवीं पृथ्वी का नैरयिक)

मनुष्य-2

(परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव)

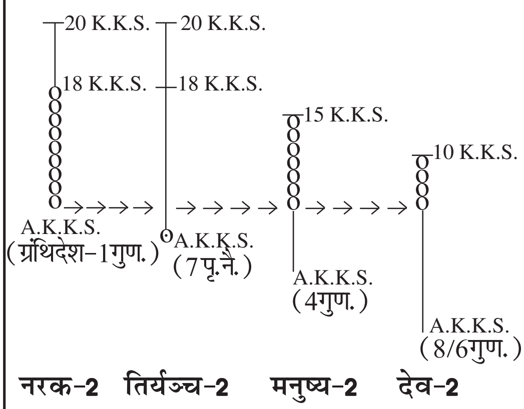

जाति नामकर्म

एकेन्द्रिय (परावर्तमान मध्यम परिणामी मनुष्य, तिर्यञ्च व भवनपति से दूसरे देवलोक के देव)

विकलेन्द्रिय (परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च)

पंचेन्द्रिय

(अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव नवरं भवनपति से दूसरे देवलोक के देव छोड़कर)

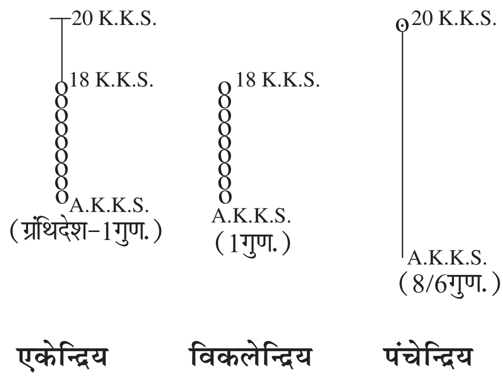

शरीर नामकर्म, अंगोपांग

औदारिक शरीर-

(अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि देव और नैरयिक)

औदारिक अंगोपांग-

(अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि देव और नैरयिक नवरं भवनपति से दूसरे देवलोक के देव

छोड़कर)

वैक्रिय-2

(अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च)

आहारक-2

(प्रमत्ताभिमुख अप्रमत्तयति)

तैजस, कार्मण शरीर

(अतिसंकलिष्ट परिणामी चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव)

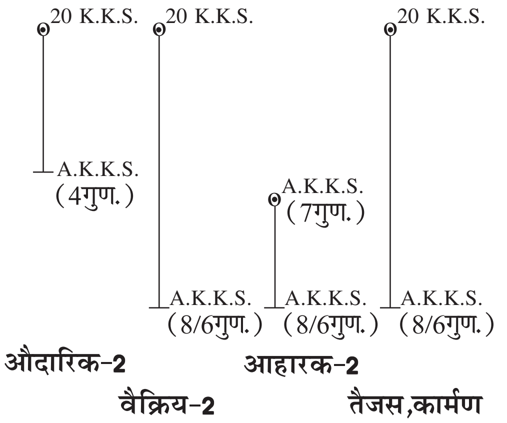

संहनन-6, **संस्थान**-6

(परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव)

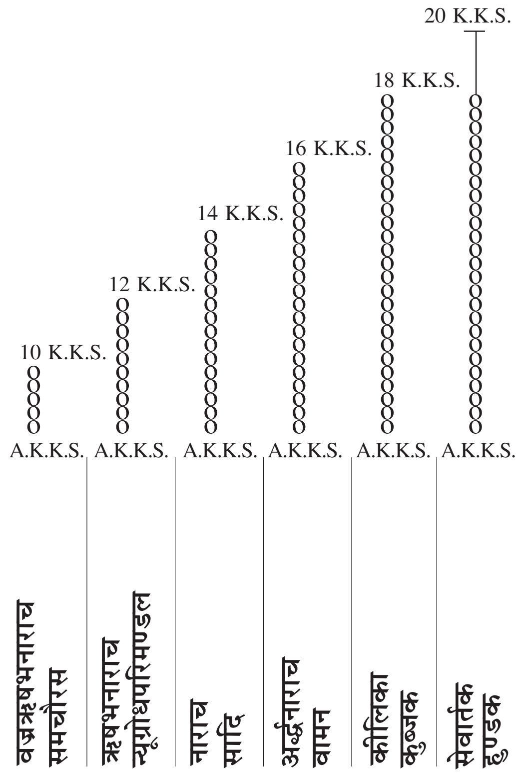

वर्णादि-4

शुभ वर्णादि-4 = अतिसंकलिष्ट परिणामी चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव।

अशुभ वर्णादि-4 = 8/6 भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव।

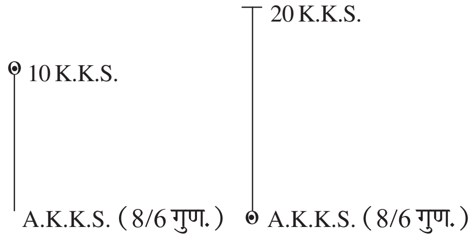

शुभवर्णादि-4 **अशुभवर्णादि-4**

विहायोगति-2

शुभ विहायोगति, अशुभ विहायोगति

(परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव)

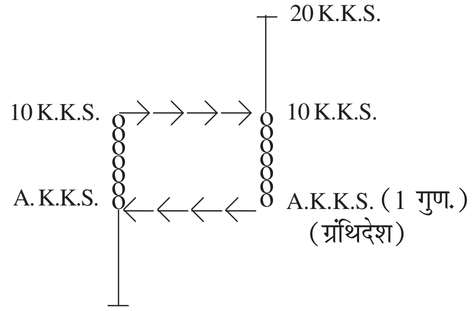

शुभविहायोगति **अशुभविहायोगति**

त्रस, स्थावर

त्रस

(अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव) भवनपति से दूसरे देवलोक के देव छोड़कर

स्थावर

(परावर्तमान मध्यम परिणामी मनुष्य, तिर्यञ्च, भवनपति से दूसरे देवलोक के देव)

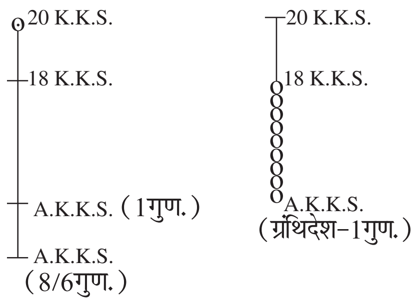

त्रस **स्थावर**

बादर-3, **सूक्ष्म**-3

बादर-3

(अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि चारों गति के जीव)

सूक्ष्म-3

(परावर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य व तिर्यञ्च)

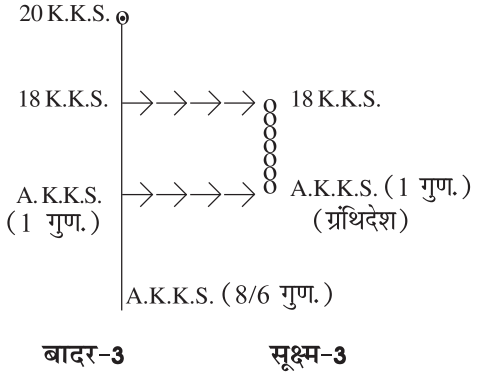

स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति

(परावर्तमान मध्यम परिणामी चारों गति के सम्यक्‌दृष्टि या मिथ्यादृष्टि जीव)

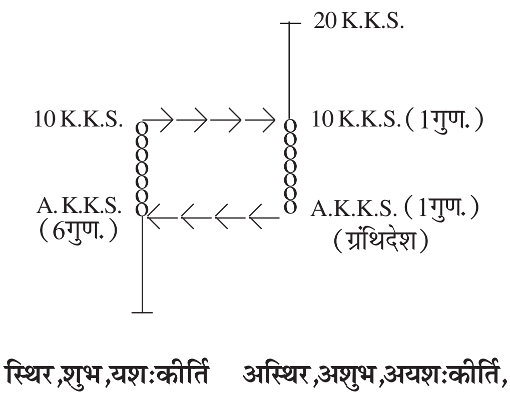

सुभग, सुस्वर, आदेय व **दुर्भग, दुस्वर, अनादेय**

(परावर्तमान मध्यम परिणामी चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव)

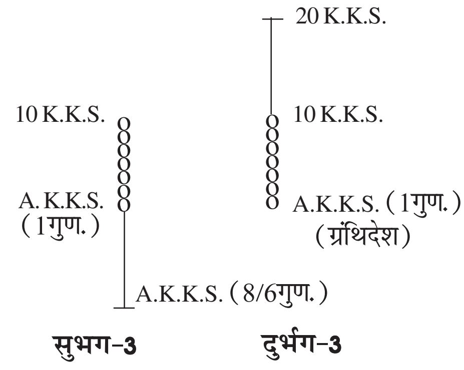

प्रत्येक प्रकृतियाँ–

पराघात, उच्छ्वास, निर्माण, अगुरुलघु

(अतिसंकलिष्ट परिणामी चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव)

उपघात

(8/6 भाग अंतिम समयवर्ती क्षपक जीव)

आतप

(अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि भवनपति से दूसरे देवलोक के देव)

उद्योत

(अतिसंकलिष्ट परिणामी मिथ्यादृष्टि नैरयिक व देव)

जिननाम

नरकायु बद्ध मिथ्यावाभिमुख क्षयोपशम सम्यक्त्वी अविरत सम्यक्दृष्टि जीव।

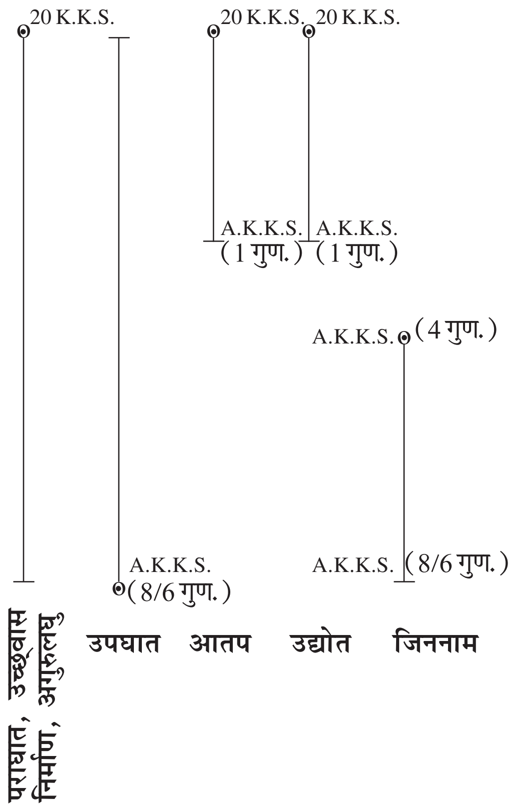

III सादि-अनादि प्ररूपणा

(मूल कर्म विषयक)

सादि अनादि प्ररूपणा का वर्णन चार प्रकार के रस बंध के माध्यम से किया जा रहा है-

रसबंध

- I जघन्य
- II अजघन्य
- III उत्कृष्ट
- IV अनुत्कृष्ट

जघन्य- सबसे कम रसबंध जघन्य रसबंध कहलाता है।

अजघन्य- एक अनुभाग (रस) अधिक जघन्य अनुभाग बंध से लेकर उत्कृष्ट अनुभाग बंध तक के सभी अनुभाग बंध अजघन्य अनुभाग बंध कहलाते हैं।

उत्कृष्ट- सबसे अधिक रसबंध उत्कृष्ट रसबंध कहलाता है।

अनुत्कृष्ट- एक अनुभाग कम उत्कृष्ट अनुभाग बंध से लेकर जघन्य रसबंध तक के सभी अनुभाग बंध अनुत्कृष्ट अनुभाग बंध कहलाते हैं।

सादि-अनादि, ध्रुव-अध्रुव की परिभाषा

सादि- जिस बंध की शुरुवात होती है वह बंध सादि कहलाता है।

अनादि- जिस बंध की कभी शुरुवात नहीं हुई अर्थात् जो बंध अनादिकाल से निरंतर चल रहा है वह बंध अनादि कहलाता है।

ध्रुव- जो बंध अनादिकाल से निरंतर चल रहा है एवं अनंतकाल तक निरंतर चलता रहेगा अर्थात् जिस बंध का कभी अंत नही होगा वह बंध ध्रुव कहलाता है।

अध्रुव- जिस बंध का अंत होगा वह बंध अध्रुव कहलाता है।

नियम-I जो बंध सादि होता है वह नियमा अध्रुव होता है। इसका कारण यह है कि सादि की परिभाषा यह है कि जिसकी शुरुवात हुई है एवं ध्रुव की परिभाषा यह है कि अनादिकाल से निरंतर चल रहा है एवं अनंतकाल तक निरंतर चलता रहेगा। उपर्युक्त दोनों परिभाषाओं से यह सुस्पष्ट है कि जो बंध सादि है वह ध्रुव नहीं हो सकता है क्योंकि सादि की शुरुवात होती है, ध्रुव की कभी शुरुवात नहीं होती। अत: यह सिद्धांत है कि जो सादि होता है नियमा अध्रुव होता है।

नियम-II जो बंध अनादि होता है वह नियमा अभव्य की अपेक्षा ध्रुव एवं भव्य की अपेक्षा अध्रुव होता है। इसका कारण यह है कि अभव्य जीवों के बंध का कभी अंत नहीं होता है परन्तु भव्य जीवों के बंध का अंत अवश्य होता है।

नियम-III जघन्य व उत्कृष्ट बंध सदैव सादि व अध्रुव होता है। इसका कारण यह है कि जघन्य व उत्कृष्ट बंध एक नियम काल पर्यन्त ही होता है। अत: यह अनादि व ध्रुव नहीं हो सकता।

4 प्रकार के बंध में सादि-अनादि प्ररूपणा

आयुकर्म- आयु का बंध एक भव में 1 बार और वह भी सिर्फ अंतर्मुहूर्त्त के लिए होता है। अत: आयुकर्म के जघन्यादि चारों प्रकार के विकल्प सादि-अध्रुव हैं।

आयुष्य कर्म का बंध

	सादि	अनादि	ध्रुव	अध्रुव
जघन्य	✓	–	–	✓
अजघन्य	✓	–	–	✓
उत्कृष्ट	✓	–	–	✓
अनुत्कृष्ट	✓	–	–	✓

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, अंतराय कर्म

I. जघन्य रसबंध- जघन्य रसबंध क्षपकवर्ती जीवों को नवें, दसवें गुणस्थान के चरम समय में होता है वह 1 समय मात्र होने से सादि-अध्रुव है।

II. अजघन्य रसबंध- उपर्युक्त जघन्य रसबंध के अतिरिक्त शेष सभी रसबंध अजघन्य है। घाति कर्मों का जघन्य रसबंध क्षपक श्रेणी में होता है। अत: उपशमक जीव के इन चारों कर्मों के बंध विच्छेद काल के अंतिम समय तक अर्थात् 9वें गुणस्थान के अंतिम समय मोहनीय कर्म का एवं 10वें गुणस्थान के अंतिम समय तक शेष 3 कर्मों का अजघन्य रसबंध ही होता है। इन चारों कर्मों का बंध विच्छेद करने के पश्चात् उपशम श्रेणी में भवक्षय या अद्धाक्षय से गिरने पर जब पुन: इन प्रकृतियों का बंध प्रारंभ होता है तब अजघन्य रसबंध की सादि होती है।

जिन भव्य जीवों ने अभी तक क्षपक श्रेणी में जघन्य रसबंध नहीं किया या उपशम श्रेणी आरोहण करके कर्मों का बंध विच्छेद नहीं किया उन जीवों की अपेक्षा अजघन्य रसबंध अनादि है तथा भव्य जीव इस बंध का अंत अवश्य करता है अत: अध्रुव है।

अभव्य जीव की अपेक्षा अजघन्य रसबंध अनादि-ध्रुव है।

III. उत्कृष्ट रसबंध- सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव अतिसंकलिष्ट परिणाम में उत्कृष्ट रसबंध करता है वह भी 1 व 2 समय तक ही करता है अत: वह सादि-अध्रुव है।

IV. अनुत्कृष्ट रसबंध- उत्कृष्ट रसबंध के अतिरिक्त शेष सभी बंध अनुत्कृष्ट हैं। कोई भी जीव ऐसे नहीं हैं जो अनादिकाल से निरन्तर अनुत्कृष्ट बंध कर रहे हों। सभी जीवों ने अनंत बार उत्कृष्ट रसबंध किया है क्योंकि जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनंत उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल में जीव एक बार इन कर्मों का उत्कृष्ट रसबंध अवश्य करता है। अत: अनुत्कृष्ट रसबंध भी सादि-अध्रुव है।

ज्ञानावरणीय आदि 4 कर्मों का बंध

	सादि	अनादि	ध्रुव	अध्रुव
जघन्य	✓	-	-	✓
अजघन्य	✓	✓	✓	✓
उत्कृष्ट	✓	-	-	✓
अनुत्कृष्ट	✓	-	-	✓

वेदनीय व नामकर्म

I. जघन्य रसबंध- वेदनीय* व नामकर्म* का जघन्य रसबंध परावर्तमान मध्यम परिणामी सम्यक्दृष्टि व मिथ्यादृष्टि जीव को होता है, वह भी जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 4 समय पर्यन्त ही करता है अत: वह सादि-अध्रुव है।

II. अजघन्य रसबंध- जघन्य रसबंध के बाद अजघन्य रसबंध होने से सादि है एवं जो बंध सादि होता है वह नियमा अध्रुव होता है अत: अजघन्य बंध भी सादि-अध्रुव है।

III. उत्कृष्ट रसबंध- वेदनीय व नामकर्म का उत्कृष्ट रसबंध 10वें गुणस्थानवर्ती क्षपक जीव चरम समय में करता है अत: सादि-अध्रुव है।

IV. अनुत्कृष्ट रसबंध- उपर्युक्त उत्कृष्ट रसबंध के अतिरिक्त शेष सभी रसबंध अनुत्कृष्ट हैं इन दोनों कर्मों का उत्कृष्ट रसबंध क्षपक श्रेणी में होता है। अत: उपशमक जीवों के इन दोनों कर्मों का 10वें गुणस्थान में बंध विच्छेद होने तक अनुत्कृष्ट रसबंध ही होता है। इन दोनों कर्मों का बंध विच्छेद करने के पश्चात् उपशम श्रेणी में भवक्षय या अद्धाक्षय से गिरने पर जब पुन: इन प्रकृतियों का बंध प्रारंभ होता है तब अनुत्कृष्ट रसबंध की सादि होती है।

जिन भव्य जीवों ने अभी तक क्षपक श्रेणी में उत्कृष्ट रसबंध नहीं किया या उपशम श्रेणी आरोहण करके कर्मों का बंध विच्छेद नहीं किया उन जीवों की अपेक्षा अनुत्कृष्ट रसबंध अनादि है तथा भव्य जीव इस बंध का अंत अवश्य करता है अत: अध्रुव है।

अभव्य जीव की अपेक्षा अनुत्कृष्ट रसबंध अनादि-ध्रुव है।

वेदनीय व नामकर्म का बंध

	सादि	अनादि	ध्रुव	अध्रुव
जघन्य	✓	-	-	✓
अजघन्य	✓	-	-	✓
उत्कृष्ट	✓	-	-	✓
अनुत्कृष्ट	✓	✓	✓	✓

* वेदनीय व नामकर्म का वर्णन सातावेदनीय व यश:कीर्ति की अपेक्षा समझना चाहिए।

गोत्रकर्म

I. जघन्य रसबंध- सातवीं पृथ्वी का मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व प्राप्ति की प्रक्रिया में अनिवृत्तिकरण के अंतिम समय में नीचगोत्र की अपेक्षा गोत्रकर्म का जघन्य रसबंध करता है वह भी 1 समय मात्र होने से सादि-अध्रुव है।

II. अजघन्य रसबंध- सातवीं पृथ्वी के नैरयिक के अनिवृत्तिकरण के अंतिम समय में गोत्रकर्म का जघन्य रसबंध करने के पश्चात् सम्यक्त्व प्राप्ति पर उच्चगोत्र की अपेक्षा गोत्रकर्म के अजघन्य बंध की सादि होती है एवं जो बंध सादि होता है वह नियमा अध्रुव होता है तथा उपरोक्त बंध सम्यक्त्व प्राप्ति के पश्चात् होने से भव्य जीवों की अपेक्षा अनादि-अध्रुव व अभव्य जीवों की अपेक्षा अनादि-ध्रुव होता है।

उत्कृष्ट रसबंध व अनुत्कृष्ट रसबंध- वेदनीय व नामकर्म के वर्णन के समान यहाँ भी समझ लेना चाहिए।

गोत्रकर्म का बंध

	सादि	अनादि	ध्रुव	अध्रुव
जघन्य	✓	–	–	✓
अजघन्य	✓	✓	✓	✓
उत्कृष्ट	✓	–	–	✓
अनुत्कृष्ट	✓	✓	✓	✓

सादि-अनादि प्ररूपणा

(उत्तरकर्म विषयक)

ज्ञातव्य बिन्दुः-

I. मूलकर्म विषयक रसबंध स्वामित्व प्ररूपणा में सादि-अनादि द्वार में जो वर्णन किया है वह सभी वर्णन यहाँ भी समझ लेना चाहिए।

II. अध्रुवबंधिनी प्रकृतियों का बंध अध्रुव होने से उनके जघन्य आदि चारों बंध में सादि-अध्रुव ये 2 विकल्प ही होंगे।

III. ध्रुवबंधिनी प्रकृतियों में भी जघन्य, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट- इन तीन बंध में तो सादि-अध्रुव ये दो विकल्प ही होंगे। कारण पूर्ववत् समझ लेना चाहिए। नवरं ध्रुवबंधिनी 47 प्रकृतियों में तैजस चतुष्क (तैजस, कार्मण, अगुरुलघु, निर्माण) को छोड़कर शेष 43 ध्रुवबंधिनी प्रकृतियों के लिए उपर्युक्त वर्णन समझना चाहिए। तैजस चतुष्क संबधी वर्णन इस प्रकार है-

तैजस चतुष्क व शुभ वर्णादि चतुष्क

I. जघन्य रसबंध- तैजस चतुष्क व शुभवर्णादि चतुष्क शुभ (पुण्य) प्रकृतियाँ हैं पुण्य प्रकृतियों का जघन्य रसबंध अतिसंकलिष्ट परिणामी संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्यादृष्टि जीव करता है और यह भी जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 2 समय पर्यन्त ही होने से सादि-अध्रुव है।

II. अजघन्य रसंबध- जघन्य रसबंध के पश्चात् पुनः अजघन्य बंध होने से सादि तथा अनंत उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल में पुनः जघन्य बंध होने से अध्रुव है।

III. उत्कृष्ट रसबंध- उत्कृष्ट रसबंध क्षपक श्रेणी जीव को 8/6 के अंतिम समय में होने से सादि है एवं जो सादि है वह नियमा अध्रुव होता है।

IV. अनुत्कृष्ट रसबंध- उपशम श्रेणी से अवरोहण व काल की अपेक्षा पुनः बंध होने से अनुत्कृष्ट रसबंध की सादि होती है एवं जो सादि है वह नियमा अध्रुव होता है। अनुत्कृष्ट रसबंध भव्य जीवों की अपेक्षा सादि, अनादि, अध्रुव व अभव्य जीवों की अपेक्षा अनादि-ध्रुव होता है।

तैजस चतुष्क व शुभ वर्णादि-4 का बंध

	सादि	अनादि	ध्रुव	अध्रुव
जघन्य	✓	-	-	✓
अजघन्य	✓	-	-	✓
उत्कृष्ट	✓	-	-	✓
अनुत्कृष्ट	✓	✓	✓	✓

II. अजघन्य रसबंध- ध्रुवबंधिनी 43 प्रकृतियों का अजघन्य रसबंध उपशम श्रेणी से अवरोहण व काल की अपेक्षा पुन: बंध होने से अजघन्य बंध की सादि होती है, जिन भव्य जीवों ने अभी तक श्रेणी आरोहण नहीं किया उन भव्य जीवों की अपेक्षा अनादि अध्रुव व अभव्य जीवों की अपेक्षा अनादि-ध्रुव है।

I, III, IV. जघन्य, उत्कृष्ट व **अनुत्कृष्ट** रसबंध में सादि-अध्रुव दो ही भंग होते हैं वर्णन पूर्ववत् समझना चाहिए।

शेष 43 ध्रुवबंधिनी प्रकृतियों का बंध

	सादि	अनादि	ध्रुव	अध्रुव
जघन्य	✓	-	-	✓
अजघन्य	✓	✓	✓	✓
उत्कृष्ट	✓	-	-	✓
अनुत्कृष्ट	✓	-	-	✓

अध्रुवबंधिनी 73 प्रकृतियों का बंध

	सादि	अनादि	ध्रुव	अध्रुव
जघन्य	✓	-	-	✓
अजघन्य	✓	-	-	✓
उत्कृष्ट	✓	-	-	✓
अनुत्कृष्ट	✓	-	-	✓

सेवं भंते ! सेवं भंते !